Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 04-07-2022, Accepted: 20-07-2022, Published: 05-08-2022
Volume 3, Issue 2, 2022, Page No. 4-6

सहजोबाई व दयाबाई की भक्ति व रहस्यवाद मे अंतर

Kalpana Verma
Student, Department of Hindi, Ram Lal Anand College, New Delhi, Delhi, India

सारांश
सहजोबाई व दयाबाई मध्यकाल की दो ऐसी संत थी ,जो समाज के बंधनों को तोड़ अपने ज्ञान प्रकाश से समाज को मुक्ति का रास्ता दिखाती रही। दोनों संतों की भक्ति व रहस्यवाद में भिन्ता मिलती है। सहजोबाई गुरु कृपा को ही मुक्ति मानती हैं। सहजोबाई ने आदर्श व्यक्तित्व व समाज के लिए गुरु महत्व की प्राथमिकता को स्वीकार किया है,। वही दया बाई गुरु के द्वारा बताए राम नाम को स्मरण करने से विदेह मुक्ति व संपूर्ण इच्छाओं से छुटकारा पाने वाला मानती हैं। दयाबाई ने सत्संगति का महत्व और हरि भजन से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया है।

मूल शब्दः सहजोबाइ, दयाबाइ, भक्ति, रहस्यवाद

प्रस्तावना
प्रारंभ से ही स्त्रियों का जीवन संघर्ष आभ्यंतरिक कशमकश का रहा है। पुरुष हिंसा की ज्वाला मे दिव्य मानवता को ममता एवं सनिध्य का अनुलेखन प्रदान करने वाली नारी सदैव आत्मोत्सर्ग की मुक प्रतिमा बन उपेक्षा की पात्र बनी रहे, अब उसे मंजूर नही। वैदिक काल से मध्यकालीन नारी के अधिकारों में बहुत अंतर आया है। वैदिक काल में नारी को यज्ञ का अधिकार प्राप्त था, उसे पूर्ण अर्धनारीश्वरी का अधिकार मिला हुआ था। वही धीरे–धीरे मध्ययुग में कुसंस्कारों में पली परंपरा के बंधनों में सीमाबद्ध अशिक्षित नारी का दृष्टि बिंदु केवल ग्रह की क्षुब्ध सीमा में ही केंद्रित हो गया था। नारी में केवल ममता, त्याग, धरित्री सी सहनशीलता, निस्पृह सेवा भाव, मौन, आज्ञाकारिणी गुणों को उसकी संपूर्णता का घोतक माना गया। आधुनिक युग में भी स्त्रियों को उचित स्थान द्विवेदी युग में ही मिला। द्विवेदी युग के कवियों ने माना अगर समाज में स्त्री उत्थान न हुआ तो समाज की उन्नति नहीं हो सकती। इन कवियों ने नारी की भावना को प्रमुखता दी, द्विवेदी जी ने स्वयं नारी भावना को प्रमुखता से दिखाते हुए नारी पक्ष का समर्थन किया।

"पति को देव तुल्य हम माने, बच्चों की भी दासी है।
सेवा सदा करे नहीं सोचे, भूखी हो या प्यासी हैं।।
हे भगवान हाय तिस पर भी उपमा कैसी पाती है।
ढोर तुल्य ताडन अधिकारी हम बनाई जाती है।।"

भक्ति काल को स्वर्ण युग कहा जाता है, किंतु स्त्रियों के लिए यह समय तिमिर, द्वंद, दौजख, और अंधमिस्श्र का था। संतो ने माना जो स्त्री सदैव पति आज्ञा पालन निर्विरोध एवं सेवा निस्वार्थ भाव से करें, तथा अपने पति के शव के साथ आत्मोसर्ग कर ले वही स्त्री महान है। स्वतंत्र नारी के स्थान पर प्राधीन नारी को महान बताया गया है। उन्हें भक्ति से वंचित रखा गया। स्त्री केवल घर के खूंटे से बंधी गाय के समान तो अच्छी लेकिन भक्ति मार्ग पर चलने वाली साधु संगति को अपनाने वाली नारी को अधम, खल, पामर, समझा गया। उसे ज्ञान को नष्ट करने वाली तथा भक्ति मुक्ति में बाधा माना गया। कुछ स्त्रियों ने इन प्रतिबंधों का पुरजोर विरोध कर पारिवारिक चारदीवारी से बाहर निकल भक्ति में अपना मार्ग स्वयं बनाया। जिसमें दयाबाई व सहजोबाई नाम जगजाहिर है। किंतु दोनों महिला संतो की भक्ति में भिन्नता मिलती है।

उद्देश्य–सहजोबाई व दयाबाई की भक्ति व रहस्यवाद मे अंतर
सहजोबाई का जन्म ढुसर भार्गव कुल में 1782 संवत में 25 जुलाई 1725 ईस्वी को दिल्ली के परीक्षित पूरे नामक स्थान में हुआ था। जिन पर गुरु चरण दास के वचनों का इतना प्रभाव पड़ा, कि इन्होंने शादी वाले दिन अपना सारा श्रृंगार व गहने उतार कर घर व समाज की परवाह किए बगैर वैराग्य लेकरे संत बन गई। ये सहज स्वभाव, प्रेम और समर्पण की प्रतिमूर्ति थी। सहजोबाई अपने नाम की तरह सहज होने के गूढ़ रहस्य को बताती है। सहजोबाई को संत चरणदास ने अपने संप्रदाय में स्थान दिया, जो संत चरणदास जी की सबसे प्रिय शिष्य बनी, इन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान, योग तथा कठोर साधना पर विजय पाई। योग पर जहां पुरुषों का एकछत्र राज्य था, वही इन्होंने योग सिद्धि प्राप्त कर अन्य महिलाओं को भी इसमें पारंगत किया। गुरु भक्ति के साथ–साथ महिलाएं जिन अधिकारों से वंचित रही, उन अधिकारों को दिलाने तथा समाज में महिलाओं को केवल उपयोग की वस्तु ना समझा जाए, इस प्रबल विरोध से महिलाओं का नेतृत्व किया।

"साहनी कू तो डर घना, सहजो निरभय रकं।
कुजंर के पग बेडियां, छिति फिरै निसकं।।"

जब मंदिरों का संचालन केवल पुरुषों के अधीन था, तो सहजोबाई ने अपने व्यक्तित्व व श्रेष्ठ संचालन प्रवृत्ति के कारण यह अधिकार भी महिलाओं को दिलाया। दयाबाई का जन्म 18वीं शताब्दी 1750 से 1775 के बीच राजस्थान के गांव डहरा के धर्म परायण हिंदू परिवार में हुआ। बचपन से भागवत भजन व भागवत पाठ पढ़कर ही यह भगवान कृष्ण को समर्पित हो गई थी। भगवान के प्रति सच्ची श्रद्धा अटूट विश्वास रखने वाली दयाबाई ने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन कर पूरा जीवन कर्म मार्ग व ज्ञान मार्ग को पार पार्थिक मूल्य मान जीवन को प्रमुख उद्देश्य के रूप में स्वीकार किया। दयाबाई ने लोगों में भक्ति भावना का प्रसार करना शुरू कर दिया, दयाबाई ने भी संत चरणदास को अपना गुरु बनाया। गुरु दीक्षा के बाद इन्होंने गरीबों व समाज कल्याण का दायित्व अपने कंधों पर उठाया। दयाबाई का प्रसिद्ध ग्रंथ दयाबोध है, इसमें राम नाम से मोक्ष प्राप्ति को बताया है।

''पैरत थाको हे प्रभु, सुझत वार न पार।
मिहर मौज जब ही करो, तब पाऊँ दरबार।।
निरपच्छी के पच्छ तुम, निराधार के धार।
मेरे तुम ही नाथ इक, जीवन प्रान अधार ।।"

दयाबाई की भक्ति में वैराग्य तत्व की प्रधानता है, इन्होंने वैराग्य को लेकर उसी में अपना सर्वस्व प्रभु के चरणों में समर्पित कर दिया। इन्होंने सदैव निधिध्यासन कर अपने प्रभु से निकटता पाई, सहजोबाई का ग्रंथ सहज प्रकाश ही प्रकाश में आया है। जिसमें उन्होंने गुरु महिमा ,गुरु से विमुख होने पर मिलने वाले कष्ट ,गुरु की जीवन में विशिष्टता ,साधु महिमा का अंग,पूर्व जन्म तथा मरणासन्न अवस्था का वर्णन बहुत सरल भाषा में बताया है। इन्होंने गुरु को राम नाम से भी बड़ा माना है, ये गुरु के लिए राम नाम को भी त्यागने के लिए तैयार हैं।

''परमेश्वर सू गुरु बडे, गावत वेद पुराने।
सहजो हरि घर मुक्ति है, गुरु के घर भगवान।।''

सहजोबाई ने मुक्ति प्राप्ति के लिए गुरु नाम को चुना, मुक्ति का दूसरा नाम मोक्ष है। मुक्ति की इच्छा सभी मनुष्यों में सर्वोपरि होती है। किंतु मोक्ष का दूसरा नाम ही कोई इच्छा ना होना होता है, मोक्ष को वस्तु सत्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसीलिए सभी प्राणियों में मोक्ष की कल्पना आत्मवादी है, अनंत गत्वा यह एक व्यक्तिक अनुभूति ही सिद्ध हो पाती है। किंतु ज्ञान ,प्रेम और समर्पण द्वारा संसार की संपूर्ण इच्छाओं से छुटकारा पाया जा सकता है। सहजोबाई में भावात्मक गुरु भक्तिवाद पाया जाता है, जो लोग गुरु आज्ञा अवहेलना, गुरु को दोष लगाना, गुरु निंदक होते हैं, वे सदैव इस जग में मुमुक्षु बने रहते हैं, गुरु को भजने से ही मुक्ति मिल सकती है।

''गुरु आज्ञा मानै नही गुरु हि लगाने दोष।
गुरु निदक जग में दुखी मुये व पावै मोष।।"

दयाबाई राम नाम से मोक्ष प्राप्ति मानती है। गुरु की कृपा से ही मुमुक्षु ईश्वर की ओर उन्मुख होता है। ईश्वर की प्रत्यक्ष अनुभूति तो विदेह मुक्ति के बाद नारायण लोक में ही संभव है। दयाबाई गुरु को उनकी दया के लिए धन्यवाद देती है। गुरु ने मुझे अज्ञान स्वरूप अंधेरे का नाश कर राम नाम के प्रकाश का रास्ता दिखाया है। इसी राम नाम जपने से मुक्ति मार्ग खुल जाता है। मैं गुरु का धन्यवाद करती हूँ, गुरु ज्ञान प्रकाश से ही राम नाम को पाया है।

''श्री गुरुदेव दयाकरी, मै पायो हरि नाम।
एक राम के नाम ते ,होत सपुरन काम।।"

दयाबाई ने हरीभक्ति, बैरागी, दया भाव से जन्म मरण से मुक्ति तथा मोक्ष प्राप्ति के मार्ग को दिखाया है। गुरु को सच्चा मार्गदर्शक तथा हरी नाम की नाव को खेवनहारा गुरु को ही माना है। साधु संगति व गुरु कृपा के अभाव में व्यक्ति असंस्कृत, तेज विहीन बना रहता है। यदि गुरु कृपा हो तो मनुष्य हरि नाम के तेजपुंज को पा लेता है। हरि भक्ति विहीन व्यक्ति अंधकूप में पड़े रहने के समान हो जाता है।

''दया नाव हरि नाम की सतगुरु खेवनहार।
साधू जन के सगं मिलि तिरत न लागैवार।।"

दयाबाई मुक्ति का मार्ग दिखाने वाला तो साधु संगति व गुरु कृपा को मानती हैं। लेकिन विदेह मुक्ति व आवागमन के चक्र से सर्वदा के लिए मुक्ति भागवत भजन से ही मानती है। आनंद की उच्च अवस्था ही मोक्ष की उच्च अवस्था मानती है, भक्तों का ईश्वर से सानिध्य ही मोक्ष है, नारायण सरक्षण को आनंद और पूर्ण मुक्ति मानती हैं। किंतु वही सहजोबाई गुरु कृपा मिलने से ही मुक्ति मानती है, भक्तों का गुरु से सानिध्य ही मुक्ति है।

''जगत् तरैया भौरा की सहजो ठहरता नाही।
जैसे मोती ओस का पानी आपुली गाहा।।
धुआँ का सागाढ बना मन मे राख संजोग।
साईं माई सहजिया कवहु साचं न होय।।

ऐसे ही जग झूठ है आतम को थिरंजान।
सहजो काल भरवा सके ऐसा रूप पिछान।।"

निष्कर्ष

उस समय का समाज विषम परिस्थितियों व पतन के मार्ग पर अग्रसर था, आदर्शों व सामाजिक मूल्यों का कोई मोल नहीं रह गया था। काया सुख के लिए मनुष्य प्रतिदिन समाज में नित नए पाखंडो को जन्म देता रहता है, इसीलिए जीवन के अंतिम समय में उसे कष्ट उठाना पड़ता है। जिन लोगों के लिए मनुष्य दोषों में लिप्त होता है। अंतिम समय में कोई काम नहीं आता, सामाजिक बंधन काया बंधन के साथ ही होते हैं। मोह माया के चक्कर में फस कर मनुष्य सत्य, असत्य के भेद को नहीं जान पाता। वह अपने असत्य को ही सत्य मान समाज में दोष को जन्म देता है। यदि मनुष्य, जगत को अनित्य तथा आत्मा को सत्य मानकर कार्य करें, तो समाज में उत्पन्न हुए अनाचार विषमता आपसी संघर्ष से मुक्ति मिल सकती है। सहजोबाई ने आदर्श व्यक्तित्व व समाज के लिए गुरु महत्व की प्राथमिकता को स्वीकार किया है, सहजोबाई का व्यक्तित्व समाज सुधारक का है, वे अपनी रचनाओं में अंधविश्वासी व भ्रष्टाचारी, पथ भ्रष्ट व्यक्तियों को सदा ज्ञान से समझाती व फटकारती आई है। उनका मानना था, कि गुरु के सामने कोई प्रपंच नहीं चलता। दोनों नारी संतो के काव्य का एक–एक पद हीरे की भांति चमक देता है। दयाबाई ने यदि सत्संगति का महत्व और हरि भजन से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया है तो वैराग्य का अंग, शीर्षक से समाज के झूठे संबंधों की पोल खोली है।

''दया कुवर या जगत मे नही अपनी कोय।"

सहजोबाई जो पिंगल साहित्य की श्रेष्ठ कवित्री थी। ज्ञान जोग के बारे में कहा, कि हर व्यक्ति अपनी बुद्धि और ज्ञान के अनुरूप ही इसको धारण करता है। सहजोबाई ने गुरु भक्ति को सर्वश्रेष्ठ तथा मुक्ति का एकमात्र साधन माना, उन्होंने संपूर्ण जीवन गुरु भक्ति को समर्पित किया।

"ज्ञान भक्ति अरू जोग का, घट लेने पहचान।
जैसी जाकी बुद्धि है, सोई बतावै धयान।।"

सन्दर्भ सूची

1. महावीर प्रसाद द्विवेदी, रसक रजंक (१६२०), साहित्य रत्न भडांर आगरा, आगरा
2. दयाबोध, दया बाई
3. सहजप्रकाश, सहजोबाई
4. डॉ सावित्री सिन्हा (१६५३), मध्य कालीन हिन्दी कावयित्रिया, दिल्ली अनुसन्धान परिषद्, दिल्ली विश्वविधालय, आत्माराम एंड संस, दिल्ली
5. दया बाई की वाणी (१६२३), वेलवेडियर प्रेस, प्रयाग